शिक्षण अधिगम प्रक्रियाओं में जेंडर विभेदीकरण : एक आलोचनात्मक अध्ययन

शारदा कुमारी*

भारत को जेंडर आधारित विकासशील शिक्षा नीति के संदर्भ में जाना जाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ज़ोर डाला गया और उनको विद्यालय में लाने के विशेष प्रयास किए गए। कोशिशें ये की गईं कि लड़कियाँ न केवल विद्यालयों में आएँ बल्कि कम-से-कम प्रारंभिक शिक्षा पूरी होने तक तो बनी रहें। लड़कियों का विद्यालयों में रहना एक अलग बात है और वे विद्यालयों में किस तरह के भेदभाव का शिकार हो रही हैं; यह अलग बात है। पुरुषों और स्त्रियों के बीच के ज़्यादातर अंतर सामाजिक जीवन द्वारा बनाए गए हैं, वे न तो प्राकृतिक हैं और न स्वाभाविक। इन्हीं अंतरों के कारण महिलाएँ बहुत से बंधन और बाधाएँ झेलती हैं। विद्यालय भी उन अंतरों को पोषित करने में पीछे नहीं हैं। रोजमर्रा के विद्यालयी जीवन में होने वाली प्रक्रियाएँ सापेक्ष और निरपेक्ष रूप से जेंडर असमानता के छुपे शिक्षाक्रम के लिए ठोस पृष्ठभूमि का काम करती हैं। बच्चे जिन अंतरों के बारे में घर-परिवार व पास-पड़ोस से समझ हासिल करते हैं, विद्यालयी जीवन किस तरह से उनकी इस समझ को पुख्ता करता चलता है, यही इस शोध-पत्र के माध्यम से दर्शाने का प्रयास किया गया है।

भारत को जेंडर आधारित विकासशील शिक्षा नीति के संबंध में जाना जाता है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ज़ोर डाला गया। इसमें इस बात पर बल दिया गया कि शिक्षा को महिलाओं की मूल स्थिति में परिवर्तन के लिए एक संसाधक के रूप में प्रयोग किया जाएगा। राष्ट्रीय शैक्षणिक पद्धति महिलाओं के सशक्तीकरण की दिशा में सकारात्मक मध्यस्थ

* *वरिष्ठ प्रवक्ता*, मंडल शिक्षा एवं प्रशिक्षण संस्थान, आर. के. पुरम, सेक्टर-7, नयी दिल्ली-22

की भूमिका निभाएगी। इस संदर्भ में राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 के अतिरिक्त भारत ने कई अंतर्राष्ट्रीय समझौते भी किए, जैसे : डकार फ्रेमवर्क फॉर एक्शन-2000, द यूनाइटेड नेशंस मिलेनियम डेवलपमेंट गोल-2000, द प्रोग्रेस ऑफ़ एक्शन 1992, बीजिंग घोषणा-1995 और अब शिक्षा का अधिकार अधिनियम-2009 भी शिक्षा में जेंडर समानता की बात करता है।

शिक्षा में जेंडर समानता के इन सभी संवैधानिक प्रावधानों के बावजूद भी वास्तविकताएँ सकारात्मक रूप नहीं ले पाई हैं। विशेषकर सुविधा वंचित समूह और ग्रामीण क्षेत्रों की लड़कियों के संदर्भ में स्थिति कुछ इस प्रकार है :

- दस में से नौ लड़कियाँ ऐसी हैं जो स्कूली शिक्षा पूरी नहीं कर पाती हैं,
- शहरी क्षेत्र में 100 में से मात्र चौदह लड़कियाँ बारहवीं तक की शिक्षा पूरी कर पाती हैं,
- ग्रामीण क्षेत्रों की सौ में से सिर्फ़ एक लड़की ही पहली से बारहवीं तक की शिक्षा पूरी कर पाती है,
- विद्यालयों में बालमित्रवत् व्यवहार एवं माहौल न होने के कारण छब्बीस प्रतिशत लडके-लड़कियाँ विद्यालय छोड़ देते हैं,
- छियासठ प्रतिशत लड़कियों के अभिभावक सिर्फ़ इसलिए अपनी लड़कियों का विद्यालय छुड़वा देते हैं क्योंकि विद्यालय उन्हें अपेक्षित परिवेश नहीं दे पा रहा है,
- बावन प्रतिशत लड़कियाँ अध्यापकों के भाषायी व्यवहार से त्रस्त होकर विद्यालय छोड़ने की बात करती हैं। ये सभी तथ्य शैक्षणिक प्रक्रियाओं में निहित जेंडर सरोकारों की ओर संकेत करते हैं। जेंडर भेदभाव का सबसे व्यापक रूप है क्योंकि यह सभी वर्गों, जातियों, समुदायों में शिक्षा, रोज़गारपरक अवसरों, कार्यक्षेत्रों, घरेलू अधिकारों और यहां तक कि भाषायी संस्कारों में भी देखने को मिलता है। जेंडर भेद को एक ज्वलंत और बदलाव के बेहद महत्त्वपूर्ण कारक के रूप में पहचाने जाने की ज़रूरत है। साथ ही वास्तविक शिक्षागत ढाँचे की सभी प्रक्रियाओं में इसे विमर्श का मुद्दा बनाना ज़रूरी है। (वार्षिक रिपोर्ट 1999-2000, शिक्षा विभाग मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार, पृ. 179)

एक ओर तो स्कूलों में नामांकन में वृद्धि हो रही है, लड़के-लड़कियाँ दोनों ही प्रोत्साहित हैं विद्यालय में प्रवेश लेने के लिए। दूसरी ओर विद्यालय में चल रही शिक्षण प्रक्रियाएँ एवं कुछ अन्य कवायदें कुछ इस प्रकार की सीमाएँ तय कर देती हैं कि लड़के व लड़कियों का विभेदीकरण स्वयं आकार ले लेता है। उनमें असमान समाजीकरण से पैदा होने वाले विभेद से उबरने की क्षमता का विकास होने के स्थान पर दमनकारी या निराशावादी प्रवृत्तियाँ जन्म लेने लगती हैं जो 'पुरुषत्व' और 'नारीत्व' की पारंपरिक मान्यता को पुर्नस्थापित ही करती हैं। इन शैक्षणिक प्रक्रियाओं की आकृतियाँ/विद्यालयी उपागम ये रेखांकित करते हैं कि भिन्न जेंडर के कारण लड़कियाँ कैसे एक समूह से हटकर देखी जाती

हैं, इसके साथ ही विजातीय संदर्भ भी पैदा हो जाते हैं, जैसे : वर्ग, जाति, धर्म के साथ-साथ ग्रामीण व शहरी विभाजन। सिर्फ़ लड़कियाँ ही इस विभेदीकरण की मार को नहीं झेलतीं बल्कि लड़के भी उन समान परेशानियों को झेलते हैं जो शिक्षकों की पितृसत्तात्मक सोच द्वारा उनसे विशिष्ट प्रकार के व्यवहार की माँग करते हैं। उनसे उन रूढ़ भूमिकाओं का लबादा ओढ़े रखने की माँग की जाती है जिनसे वे ऊपर उठना चाहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि विकासशील जेंडरनीति को सफलतापूर्वक लागू करने के लिए दृष्टिकोण में बड़े बदलाव की ज़रूरत है। समानता और सशक्तीकरण को आलोचनात्मक दृष्टि से समझने की ज़रूरत है।

शिक्षा बच्चों की जिंदगी को दिशा देने वाले तत्वों में से एक है। इसलिए वास्तविकता और समान नागरिकता का लक्ष्य हासिल करने के लिए विशेष पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र की रणनीतियाँ बनानी होंगी जो बच्चों को सशक्त करें। न्याय, समानता, नागरिकता और सामूहिक स्तर पर आज़ादी सरीखे संवैधानिक मूल्यों को समझने की क्षमता पैदा करें। विद्यालयी परिस्थितियों और अपेक्षाओं के संदर्भ में बहुत से शोध प्रश्न उभरते हैं जो इस प्रकार हैं :

1. अनेक संवैधानिक प्रावधानों, विशेष लाभकारी योजनाओं के बावजूद भी लड़कियाँ विद्यालयी शिक्षा तक क्यों नहीं पहुँच पा रही हैं?
2. स्कूली शिक्षा समाज में जेंडर आधारित असमानता को किस तरह बढ़ावा दे रही है?
3. क्या जेंडर संबंधी सरोकारों को अध्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की पाठ्यचर्या का हिस्सा नहीं बनाया जाता?
4. विद्यालयी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के वे कौन-से ऐसे घटक हैं जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से बच्चों में विभाजन की तस्वीरें उकेरते हैं?
5. वर्गीय, सामाजिक, आर्थिक व जेंडर विभेदीकरण की नीति से बच्चों के नैतिक विकास और उपलब्धियों पर किस तरह से असर पड़ता है?
6. किसी भी विद्यालय में विकासशील जेंडर नीति को लागू करने के लिए किस तरह की तैयारी की ज़रूरत है और किस तरह का धरातल तैयार करना पड़ेगा?
7. वर्तमान शैक्षणिक प्रक्रियाओं में लड़कियों की समानता और सशक्तीकरण को कैसे उभारा गया है?
8. विद्यालयों में शिक्षकों द्वारा इस्तेमाल की जा रही भाषा किस तरह जेंडर असमानता का परिवेश पैदा करती है?
9. शिक्षकों द्वारा भाषा का अलग तरीके से इस्तेमाल परिस्थितियों और माहौल को किस तरह से एक पक्ष को सबल बनने की दिशा की ओर ले जाता है?

उपर्युक्त शोध प्रश्नों के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत शोधकार्य के निम्नलिखित उद्देश्य रहे:

परियोजना के उद्देश्य :

1. विद्यालयी शिक्षा की मौजूदा प्रक्रियाओं और जेंडर असमानता के पारस्परिक संबंध के प्रति समझ बनाना।
2. उन संस्थागत प्रावधानों की प्रभावशीलता का अध्ययन करना जो शिक्षा में जेंडर संबंधी चुनौतियों को संबोधित करने के लिए लागू की गई थीं।
3. शिक्षण अधिगम प्रक्रिया के उन घटकों की पहचान करना जो जेंडर विभेदीकरण को जन्म देते हैं और उसे पुख्ता करते हैं।
4. जेंडर की सामाजिक संरचना, जेंडर भूमिकाओं और उनकी रूढ़ छवियों के बालकों के विकास व उपलब्धि स्तर पर प्रभाव का अध्ययन करना।
5. अध्यापकों की तैयारी में जेंडर विमर्श की स्थिति, स्तर व युक्तियों का विश्लेषण करना।
6. जेंडर समानता के संदर्भ में पाठ्यक्रम और शिक्षाशास्त्र के स्तर पर रचनात्मक हस्तक्षेप की पृष्ठभूमि तैयार करना।
7. प्रगतिशील जेंडर आधारित विद्यालयी माहौल तैयार करने के लिए सशक्त रणनीतियाँ सुझाना।

शोध अध्ययन में प्रयुक्त शब्दावली का स्पष्टीकरण –

शोध अध्ययन का शीर्षक है ''*शिक्षण अधिगम प्रक्रियाओं में जेंडर विभेदीकरण : एक आलोचनात्मक अध्ययन*''

उपर्युक्त शीर्षक में प्रयुक्त शब्दावली का स्पष्टीकरण इस प्रकार से है –

शिक्षण अधिगम प्रक्रिया — विद्यालयी शिक्षा व्यवस्था एक निश्चित ढाँचे की परिधि के भीतर कार्य करती है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया उसका महत्त्वपूर्ण घटक है। प्रस्तुत अध्ययन के संदर्भ में निम्नलिखित को आधार बनाया गया है —

- कक्षा में विद्यार्थियों के बैठने की व्यवस्था
- अध्यापन एवं गतिविधियों के आयोजन की दृष्टि से विद्यार्थियों के समूह-निर्माण की प्रक्रिया
- कक्षा अंत:क्रिया
- अध्यापक अभिवृत्ति
- अध्यापकों का विषयपरक ज्ञान
- शिक्षण विधियाँ
- अध्यापकों का भाषिक व्यवहार
- प्रदत्त कार्य
- आकलन की प्रक्रिया

यद्यपि विद्यालय में मौजूद ढाँचागत सुविधाएँ, पाठ्यपुस्तकें, सामुदायिक हस्तक्षेप आदि भी शिक्षण अधिगम प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं, परंतु प्रस्तुत अध्ययन में इन घटकों को शामिल नहीं किया गया है।

जेंडर—स्त्री व पुरुष के बीच सामाजिक व सांस्कृतिक अंतर। 'पुरुषत्व' और 'नारीत्व' की पारंपरिक मान्यता। जेंडर संबंध न तो प्राकृतिक हैं और न ही स्वाभाविक। उनके बनने की प्रक्रिया ही ऐसी है कि आभास हो कि उनके बीच का असमानता का संबंध प्राकृतिक है।

विभेदीकरण—लड़के-लड़कियों में असमान समाजीकरण से पैदा होने वाला विभेद। सामाजिक ढाँचे में लड़के-लड़कियों के लिए अलग-अलग निर्धारित भूमिकाएँ जिनसे लड़कियाँ तो दमन का शिकार होती ही हैं, लड़कों को भी तयशुदा ढंग से जीना सीखने के क्रम में कष्ट होता है। असमान समाजीकरण दोनों को ही प्रभावित करते हैं और किसी को भी अपनी क्षमताओं का पूर्णत: उपयोग करते हुए व्यक्तित्व विकास की आज़ादी नहीं देते।

न्यादर्श—प्रस्तुत अध्ययन के लिए न्यादर्श का चयन करते समय उद्देश्यपरक सैम्पलिंग (Purposing Sampling) को आधार बनाया गया है। न्यादर्श की स्थिति इस प्रकार है: जिला-नयी दिल्ली।

वे प्रशासनिक इकाईयाँ जिनके द्वारा संचालित विद्यालय न्यादर्श के अंतर्गत लिए गए, इस प्रकार हैं:

- शिक्षा निदेशालय, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली
- महानगर पालिका, नयी दिल्ली
- नवयुग संस्था, नयी दिल्ली
- न्यादर्श के अंतर्गत लिए गए पाँच विद्यालय-
  - सर्वोदय विद्यालय, ज़ोर बाग, नयी दिल्ली
  - नवयुग विद्यालय, पेशवा रोड, नयी दिल्ली
  - नगरपालिका सहशिक्षा मिडिल विद्यालय, किदवई नगर, नयी दिल्ली।
  - नगरपालिका प्राथमिक विद्यालय, बाल्मीकि बस्ती, नयी दिल्ली।
  - नगरपालिका माध्यमिक विद्यालय, औरंगजेब रोड, नयी दिल्ली ।

उक्त पाँच विद्यालयों को न्यादर्श के अंतर्गत चयनित करने के संदर्भ में तर्क इस प्रकार हैं:

- ये विद्यालय राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली की औपचारिक विद्यालयी व्यवस्था की भिन्न भिन्न प्रशासनिक इकाइयों का प्रतिनिधित्व करते हैं।
- राजधानी के भिन्न-भिन्न प्रकार के रिहायशी इलाकों का स्वरूप दर्शाते हैं।
- भिन्न-भिन्न चरणों में बंटी औपचारिक विद्यालयी व्यवस्था के भिन्न-भिन्न स्तरों से संबद्ध हैं, जैसे–उच्चतर माध्यमिक, माध्यमिक, उच्च प्राथमिक और प्राथमिक स्तर।
- राज्य प्रशासन द्वारा नियंत्रित स्वैच्छिक संगठन द्वारा संचालित विद्यालय भी इस न्यादर्श में सम्मिलित हैं।

चयनित विद्यालयों में सभी पाठ्यचर्यात्मक विषयों यथा भाषा, गणित, सामाजिक अध्ययन, विज्ञान, कला, कार्य अनुभव, स्वास्थ्य एवं शारीरिक शिक्षा का प्रतिनिधित्व करने वाले पाँच-पाँच अभिभावकों और दस-दस विद्यार्थियों (लड़के-लड़कियों) को शोध प्रश्नों के उत्तर पाने का आधार बनाया गया है।

शोध पद्धति—प्रस्तुत शोध अध्ययन के लिए सर्वेक्षण अनुसंधान विधि का उपयोग किया गया। इस विधि के माध्यम से गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों प्रकार के आँकड़ों का संग्रह किया गया। शोध कार्यशैली इस प्रकार थी :

समस्या से संबद्ध संकल्पना के स्पष्टीकरण व स्पष्ट अवबोधन हेतु विभिन्न लेखों का अध्ययन किया गया। राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, नयी दिल्ली के न्यादर्श हेतु चयनित विद्यालय के चारों ओर बसावट के इलाकों की सामाजिक-सांस्कृतिक पृष्ठभूमि का अध्ययन किया गया क्योंकि उससे गुणात्मक तथ्य एकत्र करने में पूरी-पूरी मदद मिली। विद्यालयी गतिविधियों का (प्रातःकालीन बैठक से लेकर शिक्षण प्रक्रियाओं तक) अवलोकन किया गया। अध्यापकों, अभिभावकों व विद्यार्थियों के साथ केंद्रित समूह चर्चाएँ आयोजित की गईं। दत्त सामग्री प्राप्त करने के लिए द्वितीयक सूचनाओं की समीक्षा की गई।

शोध उपकरण—शोध अध्ययन की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए आवश्यक आँकड़ों का संकलन स्वनिर्मित उपकरणों की सहायता से किया गया। अध्यापकों हेतु तीन पृष्ठों की प्रश्नावली तैयार की गई जिनके प्रश्न उनकी जेंडर संबंधी अवधारणाओं का स्पष्टीकरण करने में पर्याप्त रूप से सक्षम थे। विद्यार्थियों और अभिभावकों के लिए साक्षात्कार सूचियाँ तैयार की गईं जिनके माध्यम से यह जानने में मदद मिली कि कक्षायी गतिविधियों में वे स्वयं को किस रूप में देखते हैं। शिक्षण प्रक्रियाओं एवं अन्य विद्यालयी गतिविधियों का अवलोकन करने के लिए अवलोकन सूची तैयार की गईं। अवलोकन सूची द्वारा विद्यालय में निम्नलिखित घटकों का अवलोकन किया गयाः-

- **कक्षा का भौतिक परिवेश**—इसमें दीवारों का रंग-रोगन, पंखे, बल्ब, खिड़कियों की ऊँचाई व रख-रखाव, श्यामपट्ट का आकार व ऊँचाई, दीवारों पर टंगे चित्र, अलमारी आदि घटकों को सूक्ष्म अवलोकन की परिधि में लाया गया क्योंकि जेंडर संबंधी रूढ़ छवियों का निर्माण करने में इनकी भी महत्त्वपूर्ण भूमिका है।
- **विद्यार्थियों के बैठने की व्यवस्था**—जेंडर विभेदीकरण की जब बात की जाए तो विद्यार्थियों (सहशिक्षा वाले विद्यालयों में) के बैठने की व्यवस्था पर दृष्टिपात किए बिना आगे नहीं बढ़ा जा सकता। यह समझ बनाने के प्रयत्न किए गए कि क्या लड़के-लड़कियाँ पृथक्-पृथक् बैठते हैं? क्या लड़कों को पीछे और लड़कियों को आगे बैठाया जाता है। क्या बैठने की व्यवस्था अध्यापिका/अध्यापक द्वारा संचालित होती है या फिर कोई भी विद्यार्थी अपनी इच्छानुसार कहीं भी बैठ सकता है? क्या बैठने की व्यवस्था में बहुत जल्दी-जल्दी परिवर्तन किया जाता है, यदि हां, तो क्यों ?
- **खेल के मैदान का अवलोकन**— विद्यालयों के खेल के मैदान का अवलोकन जेंडर आधारित पूर्वाग्रहों व लड़के-लड़कियों के बीच के अंतर को समझने के लिहाज़ से बहुत महत्त्वपूर्ण जगह है। अतः निर्देशित और अनिर्देशित (मध्यावकाश) समय में कई बिंदुओं का अवलोकन किया गया जैसे–

- क्या लड़के-लड़कियाँ मिलजुल कर खेलते हैं?
- यदि अलग-अलग खेल रहे हैं तो आमतौर पर दोनों के कौन-से खेल हैं जो अधिक खेले जाते हैं। साथ में खेल खेलने पर लड़कियों-लड़कों की स्थिति क्या होती है?
- शारीरिक शिक्षा, कला व कार्य अनुभव की गतिविधियों का विभाजन, चयन व निर्माण

- अध्यापकों का भाषायी व्यवहार
- अध्यापक-विद्यार्थी अंत:क्रिया
- प्रदत्त कार्य और गृहकार्य
- आकलन की प्रक्रिया

इस अध्ययन के अंतर्गत जिन विद्यालयों को लिया गया, उनमें पढ़ने वाले ज़्यादातर बच्चे बिहार, ओडिसा और उत्तर प्रदेश राज्यों से आए पहली पीढ़ी के शहरी अप्रवासी थे। अधिकतर बच्चों के माता-पिता दोनों कामकाजी थे, मात्र एक विद्यालय (पेशवा रोड) ऐसा था जहाँ सरकारी नौकरी वाले (चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी) माता-पिता के बच्चे पढ़ रहे थे। लगभग सभी मामलों में, दोनों ही अभिभावकों ने कुछ सालों की औपचारिक विद्यालयी शिक्षा हासिल की थी, कुछ माताएँ ऐसी थीं जिन्होंने पढ़ना-लिखना बिल्कुल भी नहीं सीखा था। कुछ बच्चों के भाई-बहन उसी विद्यालय में थे और कुछ लड़कियों के भाई उसी विद्यालय के आस-पास के निजी अंग्रेजी माध्यम के विद्यालय में पढ़ रहे थे। एक और बात कहना भी महत्त्वपूर्ण है कि जिन कक्षाओं व शैक्षिक-सहशैक्षिक प्रक्रियाओं का अवलोकन किया गया, वे शिक्षक निर्देशित कक्षा प्रबंधन की आंतरिक पूर्ण शैलियों की नुमाइंदगी करती थीं।

शोध अध्ययन के अंतर्गत किए गए अवलोकनों से उभरे महत्त्वपूर्ण बिंदु इस प्रकार हैं–

1. प्रात:कालीन सभाओं में जेंडर आधारित बंटवारा — विद्यालयी दिनचर्या की शुरुआत प्रात:कालीन सभा से होती थी। इस सभा का आयोजन ही यह बता देने में पर्याप्त था कि लड़के और लड़कियाँ हर तरह से फ़र्क किस्म के प्राणी हैं और दोनों को ही अलग तरह से आचरण करना है। जैसे– लड़के मात्र ड्रम बजाने, विद्यार्थियों की कतारें सीधी करने या सभा लंबी हो जाने पर अध्यापकों हेतु कुर्सियों का प्रबंध करते थे। गीत गाने में नेतृत्व की कमान लड़कियों के पास थी। माँ सरस्वती की प्रतिमा पर फूल-माला चढ़ाने का काम भी उन्हीं का था। लड़के-लड़कियों की कतारें पृथक्-पृथक् होती थीं। सभा समाप्त होने पर उन्हें कतारबद्ध होकर ही कक्षा में पहुँचना होता था पर देखा जा सकता था कि लड़कों की कतार अक्सर बीच में ही टूट जाती तो अचानक दूर से आती हुई व्यायाम शिक्षक की दहाड़ से फिर जुड़ जाती। कभी-कभार लड़कियों की पंक्ति भी बिखर जाती तो पास खड़े अध्यापकों के कथन होते –''तुम लड़कियों को तो कम-से-कम ऐसा नहीं करना चाहिए।'' या फिर ''लड़की होकर ऐसी बेशर्मी! मां-बाप ने

सिखाया नहीं कि कैसे आचार-व्यवहार करना है।'' प्रार्थना सभा के आयोजन, संयोजन, क्रियान्वयन में लड़के-लड़कियों के बीच बंटे उत्तरदायित्व स्पष्ट रूप से संकेत करते थे कि हलके-फुलके काम, कलात्मक रूझानों के काम लड़कियों को करने हैं ''तुम लड़कियों को भी नज़र नहीं आया कि ये काम भी होना है। कम-से-कम तुम से तो चूक नहीं होनी चाहिए थी।''

2. कला शिक्षा एवं कार्य शिक्षा की रूढ़िवादिता— भारतीय स्कूली शिक्षा व्यवस्था से जुड़े हर आयोग व समिति ने कार्य अनुभव व कला शिक्षा को स्कूली शिक्षा के हर सोपान के लिए एक महत्त्वपूर्ण विषय माना है। इन विषयों के अंतर्गत विद्यार्थियों को भिन्न-भिन्न गतिविधियों में संलग्न किया जाता है। पाँचों विद्यालयों के अवलोकनों ने स्पष्ट किया कि गतिविधियों के चयन में वे समाज में जेंडर संबंधी प्रचलित नीतियों को आधार बनाते हैं, जैसे–लड़कियों से रंगोली बनाना, नींबू-पानी व ओआरएस घोल, बांधनी, ब्लॉक प्रिंटिंग, सिलाई-कढ़ाई, भित्ति सज्जा, फल संरक्षण जैसी गतिविधियाँ करवाई जाती हैं और लड़कों के लिए पतंग बनाना, बागवानी, बजट बनाना, कारपेंटरी, पुताई करना, स्क्रीन प्रिंटिंग, जिल्दसाज़ी जैसी गतिविधियाँ निर्धारित की गई हैं। अध्यापकों का स्पष्ट मत था कि ''भला लड़कों को रंगोली, बांधनी जैसे कामों से क्या लेना-देना, उन्हें तो बाहर के ही काम सौंपे जाएँ।'' इसी प्रकार जिल्दसाज़ी व बढ़ईगीरी जैसे काम वे लड़कियों के लिए उचित नहीं मान रहे थे क्योंकि वे 'लड़कियाँ' हैं।

3. खेल के मैदान में विभेदीकरण का प्रभाव— खेल के मैदान का दो रूपों में अवलोकन किया गया। एक तो निर्देशित खेल की घंटी, दूसरा मध्यावकाश का समय। खेल की निर्देशित घंटी में व्यायाम शिक्षक जो सीटी व छड़ी के बगैर कभी नज़र नहीं आए लड़के-लड़कियों को अलग-अलग टोलियों में खेल खिलवाते थे। बेसबाल, खो-खो, बैडमिंटन लड़कियाँ खेलती थीं। कबड्डी, फुटबाल दौड़, किक्रेट लड़के खेलते थे। खेल की अनिर्देशित घंटी व मध्यावकाश के समय जेंडर संस्कृति में छिपी ताकत का विभाजन स्पष्टत: नजर आता था। आमतौर पर लड़के और लड़कियाँ अलग-अलग ही खेलते थे। कुछ चुलबुली और कद-काठी में बड़ी-सी दिखने वाली लड़कियाँ कभी-कभी लड़कों के साथ नज़र आईं पर एक भय के साथ कि कहीं कोई शिक्षक उन्हें लड़कों के साथ खेलता हुआ देख न ले। खेल का मैदान एक आम मूक सहमति के आधार पर एक जेंडर समुदाय के उपयोग के लिए बंटा हुआ था। मसलन गेट और दीवार के आस-पास की जगहों पर लड़कों का अधिकार था। झूलों के आस-पास, क्यारियों व सीढ़ियों के आस-पास लड़कियों के झुँड देखे जा सकते थे। लड़कियों के खड़े होने के अंदाज़ से महसूस किया जा सकता था कि वे स्वच्छंदता का अनुभव नहीं कर पा रही हैं जबकि लड़के इस तरह के भाव प्रदर्शन से कोसों दूर थे। हवा आने पर अपने उड़ते दुपट्टे संभालना, बालों की लटें सँवारना, उन्मुक्त हँसी को दबाना, धीमी आवाज़ में बात

करना यह सब लड़कियों के संदर्भ में उनके आरंभिक समाजीकरण की अनुगूँजें ही थीं, जो विद्यालय में पोषित हो रही थीं जबकि लड़कों में एकदम बेपरवाही का अंदाज़ पाया गया।

4. कक्षागत व्यवस्था का अंदाज़—पहली घंटी से लेकर आखिरी घंटी तक कक्षा में बहुत-से काम होते हैं जो अध्यापक द्वारा कक्षा के कुछ चुने हुए बच्चों को सौंप दिए जाते हैं। ये चयनित बच्चे आमतौर पर बड़े डील-डौल वाले, तुलनात्मक रूप से आर्थिक संपन्नता वाली पृष्ठभूमि के और कुछ दबंग प्रवृत्ति के होते हैं। श्यामपट्ट साफ़ करना, कक्षा से कूड़ा-करकट उठाना, टाट-पट्टी/कुर्सियों/बेंच की व्यवस्था करना, उपस्थिति पंजिका लाना व उपस्थिति लगाना लड़कियों के काम हैं। उपस्थिति लगाने का काम तो लड़कियों को खास तौर पर दिया जाता है क्योंकि ''लड़कियाँ कुछ डरपोक-सी होती हैं, वे झूठी हाज़िरी कभी नहीं लगाएंगी।'' अर्थात लड़कियों की ईमानदारी को सद्‌गुण के रूप में न देखकर 'डरपोक' के रूप में देखना जेंडर विषमता का एक और भयानक स्वरूप है जो विद्यालयों में विराजमान है। अनुशासन संबंधी कार्य यथा कक्षा को चुप करवाना, कतारबद्ध करवाकर खेल या पी.टी. के लिए ले जाना आदि लड़कों के उत्तरदायित्व थे जो उनके 'ताकतवर' होने का सबूत देते थे। लड़कियों से पूछा गया कि क्या वे इस तरह के काम करने में सक्षम नहीं है? पहले तो सकुचाहट भरी चुप्पी छाई रही फिर कहा गया-''घर में भी तो पापा भैया के जिम्मे ही रहते हैं ये काम।'' कहने का तात्पर्य यह है कि घर में जेंडर आधारित बटँवारे की व्यवस्था को झेल रही लड़कियाँ यहाँ भी उस विभाजन की त्रासदी को झेल रही थीं और अनजाने ही मान बैठी थीं कि वे 'रौबीली' हो ही नहीं सकतीं क्योंकि यह गुण तो लड़कों के लिए आरक्षित है।

5. शिक्षक रहित कक्षा का वातावरण—विद्यालय के पूरे दिन के कार्यक्रम में अक्सर ऐसा समय आता जब कक्षा में कोई भी शिक्षक न हो। (निश्चित रूप से अध्यापक की अनुपस्थिति के कारण या अध्यापक की प्रशासनिक कार्यों में व्यस्तता रहने के कारण ऐसा होता होगा) शिक्षक का कक्षा में न आना एक पर्व की भाँति होता है बच्चों के लिए। इस पर्व का उत्साह लड़के-लड़कियों दोनों पर दिखाई देता है पर उत्साहित होने के तरीके अलग-अलग होते हैं। लड़के कुर्सियाँ/बेंच पटकने, धक्का-मुक्की करने, पानी की बोतलों के पेंच लड़ाने, कागज़ के हवाई जहाज उड़ाने जैसे 'ताकतवर' कामों में व्यस्त दिखाई देते हैं, जबकि लड़कियाँ 'होमवर्क' करती हुई, जीरोकाटा खेलती हुई, एक दूसरे से गप लड़ाती हुई या श्यामपट्ट पर तस्वीर बनाती हुई देखी जा सकती हैं।

अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि विद्यालय संस्थागत व्यवस्था के रूप में जेंडर आधारित अलगाव को बढ़ावा दे रहे हैं। बच्चे जेंडर में बंटकर रोजमर्रा के कामकाजों को करना अपनी नियति मान रहे हैं। विभेदीकरण पर आधारित होने की वजह से कामकाज की व्यवस्थाएँ जेंडर भेदभाव और बच्चों में जेंडर

आधारित विभेदता की धारणा को वाजिब ठहराने के काम में आ रही हैं। विद्यालयों के अंदर होने वाले व्यवहारों के प्रतिरूप जेंडर असमानता के छुपे शिक्षाक्रम के लिए पृष्ठभूमि का काम कर रहे हैं। बच्चे अपनी जेंडर आधारित पहचान को संस्थागत तौर पर विद्यालय की छोटी-सी दुनिया में विद्यालय के 'जेंडर आधारित चश्मे' की मदद से देख-समझ और ग्रहण कर रहे हैं। उस जेंडर आधारित चश्मे से जो रोज़-ब-रोज़ के विद्यालयी जीवन में आमतौर पर होने वाले व्यवहारों, रोज़मर्रा के काम-काजों व नीतियों से बन रहा है।

विद्यालयी शिक्षा से सरोकार रखने वाले हम सभी व्यक्तियों के लिए इस बात की पहचान करना ज़रूरी है कि विद्यालय के अंदर होने वाली गतिविधियों और प्रशिक्षण प्रक्रियाओं के स्वरूपों के ज़रिए बच्चे घर की तुलना में ज़्यादा औपचारिक तरीके के साथ विभेदीकरण का शिकार हो रहे हैं। इस ज़रूरी चेतावनी के प्रति हम सभी को सतर्क होना होगा और जेंडर आधारित समतावादी विद्यालयीकरण की ओर बढ़ने के लिए अपनी समझ को टटोलना होगा।